# मुस्लिम कथाकारों के हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक स्तर पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव

**शोध–छात्र ईश्वर चन्द्र**
हिन्दी विभाग डी0 ए–वी0 कालेज कानपुर
रजि0– 15190071

मुस्लिम कथाकारों के हिन्दी उपन्यासों की विषय वस्तु का परिदृश्य बहुत ही व्यापक है। इनके उपन्यासों के अध्ययन से यह पता चलता है कि समाज में जिस प्रकार के परिवर्तन हो रहे है उनका चित्रण अधिकाशतः इन कथाकारों ने किसी न किसी रूप में चित्रित किया है, लेकिन औपन्यासिक विषय वस्तु मुस्लिम समाज के केन्द्र में ही रही है, जो अपने साथ समाज एवं संस्कृति से अलग नही है। मुस्लिम कथाकारों ने मुस्लिम समाज और उनसे जुड़े विविध पक्षो, समस्याओं आदि के औपन्यासिक रूपान्तरण के साथ ही इन लेखकों ने हो रहे सामाजिक धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों को भी अपने उपन्यास का विषय क्षेत्र बनाया है, जो प्रायः प्रत्येक समाज में न्यूनाधिक रूप में दिखाई देता है।ये परिवर्तन, स्त्री पुरूष सम्बन्ध, वेश भूषा, रहन–सहन, सामाजिक सांस्कृतिक क्षेत्र से भी जुड़ा हो सकता है और इससे अलग भी।

भारतीय संस्कृति की एक बहुत बड़ी विशेषता दूसरी संस्कृति के लोगो को भी अपने प्रभाव में लाकर उनसे कुछ लेकर अपना कुछ देकर जीवन की मुख्यधारा से जोड़ने की रही है। इस्लाम जब अरब देशों से भारत में आया तो उसका स्वरूप वही नही रह गया जो यहाँ आने से पहले था। भारतीय संस्कृति के अनेक सकारात्मक और नकारात्मक कहे जाने वाले तत्वों से उसे प्रभावित किया। मुसलमानों के अनेक रीति रिवाज, रहन सहन, एवं परम्पराओं का स्वरूप यहाँ आकर बदल गया। भारत में मुस्लिम समाज की स्थापना हो जाने के बाद यहा की जनता के एक बड़े हिस्से द्वारा या तो इस्लाम की धार्मिक विशेषताओं से प्रभावित होकर अथवा राजनैतिक कारणों से इस्लाम धर्म ग्रहण करना था । इस्लाम ग्रहण करने के बाद भी यह जनता हिन्दू धर्म के प्रभावों से पूर्णतया मुक्त न हो

सकी। हिन्दू धर्म के संस्कार ने धर्मान्तरित होने के बाद भी जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन के प्रत्येक अंग पर अपने प्रभाव चिन्ह अंकित किये। ये प्रभाव चिन्ह जाति व्यवस्था से लेकर उपासना, रीति–रिवाज, रहन–सहन आदि सभी अंगो पर थी। वे यहाँ की कुछ सांस्कृतिक विशेषताओ से इतना प्रभावित हुए कि इन्हे अपने जीवन शैली में शामिल कर लिया। धीरे धीरे ये संस्कार उनके जीवन का अंग बन गए और उसी रूप में देखे जा सकते है ।

मुस्लिम संस्कृति का भारतीयकरण होने से उनके वेशभूषा, रहन, सहन, खान–पान व्रत–त्यौहार आदि मे समानता मिलने लगी, क्योंकि परिवेश और परिस्थितियाँ महत्वपूर्ण कारक होते है जो किसी व्यक्ति या समाज की मानसिक बुनावट के साथ–साथ सामाजिक ढाँचे के परिर्वतन में सहायक होती है। भारतीय मुसलमानों की मानसिक व सामाजिक परिवर्तन में इन दोनों कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही हैं। मानसिक रूप से शिक्षा की ओर उनका ध्यान आकृष्ट होता है, जो कभी लड़कियों की शिक्षा के विपरीत थे। अब अनुकूल होने लगे। 'आधा गाँव' में सईदा की शिक्षा का जिक्र करते हुए तन्नू से कहलवाया है –

''क्या दादा ने तुमको पढ़ाना मंजूर कर लिया। तन्नू ने हैरत से पूछा। ''जी हाँ' सईदा हँसी ''मैने फर्स्ट डिवीजन में हाई स्कूल किया है जनाब ओर मैं अलीगढ़ में पढ़ती हूँ।''[1]

धीरे–धीरे मुस्लिम लड़कियों का शिक्षा के प्रति झुकाव हो रहा है, जो उनके रहन–सहन, में भी दिखाई देता है। लड़कियों को सिर्फ अक्षर ज्ञान कराया जाता था। जिससे वे कोई खत लिख, पढ़ लें। अब ऐसा नहीं है, उनके सामाजिक जीवन में भी परिवर्तन हो रहे है। अंग्रेजी शिक्षा ग्रहण कर रही है।

आज के परिवर्तित हो रहे समाज में मुस्लिम स्त्री–पुरूष परम्परागत मूल्यों का विरोध कर व्यक्तिगत प्रतिष्ठा के लिए संघर्ष शील हो रहे है। उनकी परम्परागत वेश भूषा, पुरूषों की लुंगी, गोल टोपी, दाढ़ी, कुर्ता, पायजामा आदि , स्त्रियों की सलवार, कुर्ता, नकाब आदि। जो समय के अनुसार बदल रहे है। पुरूषों की वेशभूषा में बहुत ज्यादा बदलाव तो

नहीं हुए फिर भी भारतीय संस्कृति का असर हुआ है। पुरूष पहनावे के मिथक बदले है। 'सूखा बरगद' में इसी ओर इशारा किया गया है, रशीदा जो इस उपन्यास की नायिका है, अपने पिता के बारे में कहती है –

''अब्बू को कभी बचपन से नमाज पढ़ते या मस्जिद जाते नहीं देखा था, जबकि अम्मी नमाज की खासी पाबन्द थी। सारे खानदान से जुदा अब्बू आमतौर पर शेरवानी की बजाय कमीज–पेंट या कोट पहनते थे। शेरवानी कभी यू ही किसी शादी–ब्याह या किसी तकरीब पर।''[2]

बदलते समाज में अब्बू अपने को ढाल रहे थे, जबकि सगे–सम्बन्धियों को नागवार लगा। उनसे अलग हो गये।

भारतीय संस्कृति में रहन–सहन से भी विभिन्न धर्म वालों की पहचान की जाती है। समय बदला, रहन–सहन भी बदल गये। अब कोई नही पहचान सकता कि अमुक व्यक्ति मुस्लिम है, पंजाबी है, ईसाई है। 'समर शेष है' उपन्यास में पहनावे को लेकर लेखक कहता है–

''खातून ने उस रोज सलमे–सितारे टँका हुआ एक बेहद खूबसूरत गरारा पहन रखा था और कमीज उसकी बिजली की रोशनी में कुन्दन की तरह दमक रही थी। अत्यन्त कोमल होने के कारण ओढ़नी बार–बार सरकी जा रही थी। कलाईयों में हरे रंग की चूडियाँ थी और गले में एक रजतवर्णी हार झूल रहा था।''[3]

मुस्लिम स्त्रियों को कुरान में साज–श्रृंगार की मनाही है। आज के परिवेश मे अपने को इससे अलग नहीं कर सकती है, जो इसका उदाहरण है। उनको किसी भी प्रकार से श्रृंगार नहीं करने दिया जाता हैं। भारत में रहने से उनके रहन–सहन, पहनावे में परिवर्तन भी धीरे–धीरे होने लगे।

मुस्लिम कुरान की शिक्षा के अलावा किसी भी अन्य बातों पर विश्वास नहीं करता है। मनुष्य जन्म एक बार होता है। उनमें पुर्नजन्म की मान्यता नहीं है। ज्योतिष, भविष्य वाणी पर भी विश्वास नहीं करते है, लेकिन आज उनकों हाथ दिखाते गंडा, ताबीज पहनते

देखते है। 'समर शेष है' उपन्यास के लेखक अब्दुल बिस्मिल्लाह स्वयं ज्योतिषी के पास जाता है–

''घूमता–घूमता मै एक ज्योतिषी के पास पहुँच गया। उसके सामने मैने अपनी समस्या रखी और उसने बताया कि सारे व्यवधान समाप्त हो जाएँगें और कार्य मे सफलता अवश्य प्राप्त होगी।''[4]

भौतिकवादी समय में कर्म पर जोर दिया जाता है। मेहनत के बदौलत ही सफलता प्राप्त की जा सकती है। ज्योतिष, दुआ, सलाम से सफलता नहीं मिलती । लेखक स्वयं इसके पक्ष में हैं।

मुस्लिम कथाकारों ने अपने उपन्यासों में वेशभूषा का यथाक्रम वर्णन किया है, जो उनकी बौद्धिक उच्चता का द्योतक है। 'टोपी शुक्ला' में लेखक स्वयं कहता है–

''जन्म लेने के लिए आज तक किसी को नाम की जरूरत नहीं पड़ती है। पैदा तो केवल बच्चे होते है। मरते–मरते वह हिन्दू, मुसलमान ईसाई, नास्तिक, हिन्दुस्तानी पाकिस्तानी, गोरे काले और जाने क्या–क्या हो जाते है।''[5]

बच्चा तो जन्म से किसी भी धर्म, जाति, देश का नहीं होता है। जन्म के बाद ही उसमें सामाजिक बदलाव होने लगते है। जो सामाजिकता की पहचान है। रहन–सहन में दिखाई देता है। इसी तरह आगे 'टोपी शुक्ला' उपन्यास में उर्दू–हिन्दी भाषा, कृष्ण–मुहम्मद में सामंजस्य स्थापित करते हुए लेखक के विचार है,'' उर्दू और हिन्दी एक ही भाषा, हिन्दवी के दो नाम है। परन्तु अब खुद देख लीजिए कि नाम बदल जाने से कैसे–कैसे घपले हो रहे है। नाम कृष्ण हो तो उसे अवतार कहते है और मुहम्मद हो तो पैगम्बर। नामों के चक्कर में पड़कर लोग यह भूल गए कि दोनों ही दूध देने वाले जानवर चराया करते है।''[6]

वेश भूषा के रूप में आज समाज में कोई अलगाव नहीं दिखाई देता। सभी वर्ग के लोग पैंट–कमीज सूट, शेरवानी पहनते नजर आते है। किसी को कोई बन्धन नहीं है। जो ऊपर हिन्दी–उर्दू व कृष्ण–मुहम्मद के उत्पत्ति व रहन–सहन में समानता है। वह ग्रहण

करने योग्य है। हिन्दी–उर्दू भाषा का एक और उदाहरण द्रष्टव्य है। जमील जो 'अपवित्र आख्यान' उपन्यास का नायक है भाषा की समानता करते हुए कहता है, ''और आप जो कह रहे थे, कि उर्दू विदेशी भाषा है, तो यह भी गलत है। उर्दू इसी देश की भाषा है। यहाँ इसका जन्म हुआ है। और यह भी सत्य नहीं है कि उर्दू सिर्फ मुसलमानों की भाषा है। भाषा चाहे कोई भी हो धर्म से उसका कोई सम्बन्ध नहीं होता है। भाषा उसी की है जो उसका व्यवहार करें।''[7]

भारतीय जनमानस में सावन, मेंहदी, कजरी झूला का विशेष महत्व है। जहाँ लडकियाँ, औरते, झुण्ड–के–झुण्ड मिलकर झूला झूलती, पेंगे मारती है। मुस्लिम समाज में भी यह परम्परा कायम हो रही है। आज का बहुरंगी परिवेश सबको अपने रंग में रंग रहा है चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान। सब में परिर्वतन हो रहे है। 'कुइयाँजान' में इसी प्रकार का वर्णन हे। लेखिका स्वयं कहती है, 'शमीमा के आंगन में बड़ा–सा नीम का पेड़ था। जिसकी मोटी डालपर हमेशा सावन में झूला डलता था। पहले पूरा खानदान जमा होता था। तरह–तरह के पकवान बनते, मेंहदी लगती, गजरे गूंथे जाते और भर–भर हाथ चूड़ी पहनी जाती। अब सारी चहल–पहल यादों का हिस्सा बनकर रह गई है।''[8]

यहाँ सावन का आनन्द हिन्दू विशेष में न होकर सभी वर्गो की जीवन शैली में घुल–मिल गया है। मेंहदी लगाना, चूड़ियाँ पहनना मुस्लिमों में हराम माना जाता है। किन्तु यह अब मुस्लिम समाज का अभिन्न अंग बन गया है। आगे चलकर ''कुइयाँजान'' में फिर लेखिका नासिरा शर्मा का कथन है–

''सावन तो दूर अब उनका निकलना ईद, बकरीद पर भी नहीं हो पाता था। अब तो घर की चहल–पहल, मोहल्ले टोले की लड़कियों से हो गई थी जो खुद ही हठकर झूला डाल लेती और फुलकी, बरे, दलभरी की जगह मैंगी ओर पेस्ट्री से और सावन की कजरी की जगह फिल्मी गीत गा, सावन के मौसम को भी किसी बर्ड–डे पार्टी में बदल डालती थी।''[9]

आज के आधुनिकीकरण के कारण समाज में सावन खत्म, कजरी खत्म, खानपान में दलभरी, बरे की जगह मैंगी, पेस्ट्री ने ले लिया है। रहन–सहन की यह शैली जीवनादर्श के लिए घातक सिद्ध हो रही है। परम्पराओं में समानता तो है, वेशभूषा से भी एक है, पर वह लगाव व प्रेम नहीं मिलता है। मुस्लिम सामाजिक जीवन में भारतीय जीवन शैली के प्रभाव का यह एक अच्छा उदाहरण है।

मुस्लिम स्त्रियों की वेशभूषा एवं रहन–सहन में बहुत ही व्यापक रूप से परिवर्तन हुए हैं। मुस्लिमों में सिन्दूर, बिन्दी लगाना मना है, फिर भी इसका प्रयोग किया जाता है। 'अपवित्र आख्यान' उपन्यास का कथानायक जमील कहता है–

''उनके गाँव में सभी लोग हिन्दू है। मुसलमानों के सिर्फ दो घर है। पड़ोस की लड़कियों के नाम सीता देवी, उर्मिला देवी वगैरह है। उसी तरह इनका नाम राबिया देवी रख दिया गया। गाँव में सभी शादी शुदा लड़कियाँ सिन्दूर लगाती है। तो ये भी लगाती है। फिर इसमें हर्ज ही क्या है।''[10]

इस प्रकार स्पष्ट है कि मुस्लिम कथाकारों ने अपने उपन्यास साहित्य के माध्यम से मुस्लिम वेशभूषा एवं रहन–सहन में हो रहे विविध परिवर्तनों पर विचार किया है। उन्होंने मुस्लिम समाज में हुए बदलाव के अनेक तथ्यों एवं पक्षों को उजागर किया है। कथाकारों का स्पष्ट विचार है कि सामाजिक जीवन को सफल बनाने के लिए हिन्दू–मुस्लिम की विविध समानताएं जीवन जीने की आधार शिला हैं जिससे कि एक खुशहाल समाज का निर्माण हो सकेगा।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. आधा गाँव, राही मासूम रजा, राजकमल प्रकाशन, प्रा0लि0 नई दिल्ली, पेपर बैक्स–अठारहवाँ संस्करण– 2016, पृष्ठ संख्या–201
2. सूखा बरगद, मंजूर एहतेशाम, राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नई दिल्ली पेपर बैक्स, दूसरी आवृत्ति –2014, पृष्ठ संख्या–15
3. समर शेष है, अब्दूल बिस्मिल्लाह, राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नई दिल्ली, संस्करण–2017, पृष्ठ संख्या–136
4. उपर्युक्त, पृष्ठ संख्या–137–138
5. टोपी शुक्ला, राही मासूम रजा, राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नई दिल्ली, पेपर बैक्स, तीसरी आवृत्ति–2014, पृष्ठ संख्या–13
6. उपर्युक्त, पृष्ठ संख्या–23
7. अपवित्र आख्यान, अब्दुल बिस्मिल्लाह, राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नई दिल्ली, पेपर बैक्स पहला संस्करण–2012, पृष्ठ संख्या–90
8. कुइयाँजान, नासिरा शर्मा, सामाजिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण– 2014 पृष्ठ संख्या–146
9. उपर्युक्त, पृष्ठ संख्या–146
10. अपवित्र आख्यान अब्दुल बिस्मिल्लाह, राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नई दिल्ली, पेपर बैक्स पहला संस्करण–2012, पृष्ठ संख्या–10